शब्द–ब्रह्म
E ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका 17 मई 2021
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

सम्पादकीय

कोरोना काल में 'कामायनी' का पुनरावलोकन

डॉ.पुष्पेन्द्र दुबे

छायावाद के आधार स्तम्भ श्री जयशंकर प्रसाद की हिंदी साहित्य की कालजयी रचना 'कामायनी' का कथानक आज विश्व पटल पर जीवंत हो उठा है। पूरी दुनिया पिछले डेढ़ साल से कोरोना महामारी से कराह रही है। चीन के वुहान शहर से शुरू हुई इस महामारी की लहरों में लाखों लोग असमय काल के गाल में समा गए। भारत में पिछले साल इतनी तबाही नहीं हुई थी। लेकिन इस साल महामारी में मनुष्यों के साथ मनुष्यता का भी दम घुटे देख रहे हैं। विज्ञान के विकास का गुणगान करते जिनकी जबान नहीं थकती, वे भी इस महामारी के सामने किंकर्तव्यविमूढ़ हो गये हैं। जिन देशों ने इस महामारी से निजात पा ली है, वे भी अज्ञात भय से भयभीत हैं। वैश्विक हो चुकी दुनिया में देशों ने अपने को समेट लिया है। अपने को खोल में बंद कर लिया है। सालभर पहले जो दुनिया कुलांचे भर रही थी, वह एकदम से ठहर गयी है। जिस विज्ञान के बल पर वह इतरा रही थी, अजेय प्रकृति को जीतने का दंभ भर रही थी, आज वह अपने प्राण बचाने के लिए जद्दोजहद कर रही है। जयशंकर प्रसाद 'कामायनी' चिंता सर्ग में लिखते हैं :

'प्रकृति रही दुर्जेय पराजित हम सब थे भूले मद में
भोले थे, हाँ तिरते केवल सब विलासिता के नद में'

पहले भी प्रकृति ने अनेक बार मनुष्य को उसकी हैसियत से अवगत कराया है, परन्तु मनुष्य विलासिता के चश्मे को हटाने में हर बार नाकाम रहा है। प्रकृति के साथ खिलवाड़ करने के साधन विज्ञान ने ही उपलब्ध कराये हैं। मनुष्य स्वयं को देवता की श्रेणी में समझने लगा है। इसके बाद भी वह अपनी रक्षा करने में असमर्थ है।

'स्वयं देव थे हम सब, तो फिर क्यों न विश्रृंखल होती सृष्टि
अरे अचानक हुई इसी से कड़ी आपदाओं की वृष्टि

हमने विकास के नाम पर एक धरती को क्या बना दिया है। प्रकृति को उजाड़ कर मनुष्य स्वयं के जीवित रहने की कल्पना कैसे कर सकता है। प्रकृति हमेशा से मनुष्य की सहचरी रही है। मनुष्य की भोगवृत्ति ने पांच तत्वों में असंतुलन स्थापित कर दिया है। मनुष्य ने जब भी अपने कर्तृत्व पर अहंकार किया है तब प्रकृति ने अपना बदला लिया है। कामायनी के 'आशा सर्ग' की ये पंकितयां देखिये :

देव न थे और न ये हैं, सब परिवर्तन के पुतले,
हाँ, कि गर्व-रथ में तुरंग-सा, जितना जो चाहे जुत ले।

आज हर किसी के चेहरे पर दुःख की लकीरें खिचीं हुई हैं। उसके सामने यह यक्ष प्रश्न है कि वह किसके लिए जीवित रहे। इस महामारी ने परिवारों को समाप्त कर दिया है। वह ईश्वर से प्रश्न करने को बाध्य है कि :

तो फिर क्या मैं जिउं और भी - जीकर क्या करना होगा ?
देव! बता दो, अमर वेदना लेकर कब मरना होगा ?

मनुष्य ने बुद्धि बल से प्रकृति को अपने काबू में किया है। मनुष्य ने बिना चित्त शुद्धि के प्रकृति के गूढ़ रहस्यों को जानकर दुनिया के सामने संकट उपस्थित कर दिया है। इसने मनुष्य के दिमाग को तो बढ़ा दिया है, पर दिल छोटा कर दिया है। संकुचित और स्वार्थी वृत्ति ने मनुष्य

शब्द–ब्रह्म
E ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका 17 मई 2021
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

को दुःख के अथाह सागर में डुबो दिया है। और अज्ञेय ने कहा ही है कि 'दुःख मनुष्य को मांजने का काम करता है।' इस दुःख में से ही वह अपने लिए नवीन संसार की रचना करने के लिए उद्यत होगा। 'श्रद्धा सर्ग' में प्रसाद लिखते हैं :

दुःख की पिछली रजनी बीच विकसता सुख का नवल प्रभात,
एक परदा यह झीना नील छिपाए है जिसमें सुख गात।

वैज्ञानिक साधनों ने मनुष्य के लिए यदि सुविधाएं जुटाई हैं तो दूसरी ओर जीवन में अशांति का संचार भी किया है। उसके जीवन से श्रद्धा तत्व बेदखल हो गया है। परिणामस्वरुप अधीरता ने उसे घेर लिया है। दुखी और अधीर मनुष्य को श्रद्धा ही ढांढस बंधा सकती है। जिसे इन पंक्तियों में देखा जा सकता है :

कहा आगंतुक ने सस्नेह- अरे तुम हुए इतने अधीर
हार बैठे जीवन का दांव, जीतते मर कर जिसको वीर।

मनुष्य के सामने विज्ञान ने इंद्रजाल बुना है। जिसमें वह फंस गया है। वह जिसे सुख मानकर चल रहा है, वही उसके दुःख का कारण है। प्रकृति के साथ संघर्ष ने उसे यहाँ तक पहुंचाया है। वह परिपूर्ण हो जाना चाहता है। इस चाहत में उसने भयानक भूलें की हैं। इस ओर प्रसाद जी इशारा करते हुए लिखते हैं

सदा पूर्णता पाने को सब भूल किया करते क्या?
जीवन में यौवन लाने को जी-जी कर मरते क्या ?

अपने आपको सदा युवा बताने की चाहत ने मनुष्य की क्या दशा कर दी है। आज मनुष्य ने कोई भी नियम नहीं मानने का जैसे संकल्प कर लिया है, जबकि वह स्वयं नियामक है। इसका परिणाम आज सारी दुनिया के सामने है। 'संघर्ष सर्ग' में प्रसाद जी लिखते हैं :

और कह रही 'किन्तु नियामक नियम न माने,
तो फिर सब कुछ नष्ट हुआसा निश्चय जाने।

आज यही स्थिति मनुष्य सभ्यता के सामने उपस्थित हुई है। प्रकृति के नियम न मानकर वह अपने लिए जीवन की संभावना को लगातार कम कर रहा है। लाखों-करोड़ों वर्षों से संचित प्राकृतिक संसाधनों का मनुष्य ने बेतहाशा दोहन किया है। प्रकृति ने उससे विवेक की अपेक्षा की थी। मनुष्य के लोभ और भोगलिप्सा ने धरती को विनाश की कगार पर ला खड़ा किया है। उपर्युक्त पंक्तियों में यही चेतावनी दी गयी है।

इतना होने के बावजूद आशा बनी हुई है इसके पहले कि बहुत देर हो जाए मनुष्य स्वयं की गलतियों से सीख कर प्रकृति के साथ संघर्ष का भाव भूल कर उसके साथ सहयोगात्मक रवैया अपना लेगा। उससे मानवता विजयिनी हो जायेगी। प्रसाद जी लिखते हैं :

शक्ति के विद्युत्कण, जो व्यस्त विकल बिखरे हैं, हो निरुपाय,
समन्वय उसका करे समस्त विजयिनी मानवता हो जाए।

विज्ञान युग में साहित्य मनुष्य को संबल प्रदान करेगा। उसके दुखों से निवृत्ति का मार्ग इसमें छिपा हुआ है। शाश्वत साहित्य मनुष्य के हृदय में श्रद्धा का उदय कर आशा का संचार करने में सक्षम है। कामायनी में मनु अंततः श्रद्धा के पास लौट कर आये। आज विज्ञान के साधनों ने मनुष्य की श्रद्धा को डावांडोल कर दिया है। मनुष्य को इस श्रद्धा को फिर से प्राप्त करना होगा। सृष्टि संतुलन के सिद्धांत को समझ कर विज्ञान और अध्यात्म के आधार से वह ऊंची उड़ान भर सकेगा।

शब्द-ब्रह्म की ओर से सभी ज्ञात-अज्ञात व्यक्तियों के निधन पर विनम्र श्रद्धांजलि।